# श्रीविद्या सम्पुटित दुर्गा–सप्तशती पाठ

# Shri Vidya Samputit Durga Saptshati Path

नवरात्री समय 16.3.2010 से 25.3.2010



**About The Author**

**Name :-** **Shri Yogeshwaranand Ji**

**Mb :-** **+919917325788, +919410030994**

**Email ;-** **shaktisadhna@yahoo.com**

यदि जीवन में धन् सम्मान मोक्ष तथा वीरता की कामना हो और इसी जीवन में चतुर्विध पुरूषार्थ की सिद्धि की चाह हो तो नवरात्रौ में इस पाठ को अवश्य करें । आप केवल प्रतिदिन दो पाठ करें और मेरा विश्वास और आशीर्वाद आप सभी सुधी जनो से है कि आपकी सम्पुर्ण मनोकामनांए अक्षरत : मॉ भगवती दुर्गा और त्रिपुरसुन्दरी की कृपा स्वरुप अवश्यमेव प्राप्त होंगी ।

योगेश्वरानन्द

# श्रीललिता-सप्तशती पाठ-विधि

( १ ) **आसन एवं आत्म-शोधन**—अपने आसन के अग्र भाग में भूमि पर स-विन्दु 'त्रिकोण-वृत्त-चतुरस्त्र' का मण्डल बनाकर 'गन्ध-पुष्प' से उसका पूजन करें—ॐ आधार-शक्तये नमः।

( २ ) फिर उक्त मण्डल पर 'नमः' मन्त्र से जल छिड़कें और 'पञ्च-पात्र' रखकर 'ॐ' मन्त्र से उसके जल में 'गन्ध-पुष्प' छोड़कर, 'अंकुश-मुद्रा' द्वारा 'तीर्थों का आवाहन' करें। यथा—

ॐ गङ्गे च यमुने चैव, गोदावरि सरस्वति! नर्मदे सिन्धु कावेरि!, जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।।

( ३ ) **भूतापसारण**—इसके बाद 'फट्'-मन्त्र का ७ बार जप करते हुए 'श्वेत सर्षप' ( सरसों ) या 'अक्षत' हाथ में लेकर निम्न मन्त्र का उच्चारण कर उन्हें अपने चारों ओर बिखेर दें—

ॐ अपसर्पन्तु ते भूता, ये भूता भुवि संस्थिताः। ये भूता विघ्न-कर्त्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।।

( ४ ) **आसन-शुद्धि**—पहले आसन पर निम्न मन्त्र से 'गन्ध-पुष्प' छोड़ें—ॐ ह्रीं आधार-शक्तये कमलासनाय नमः। फिर आसन पर हाथ रखकर निम्न प्रकार से 'आसन-शोधन-मन्त्र' हेतु 'न्यास' करें। यथा—

विनियोग—ॐ अस्य आसन-शोधन-मन्त्रस्य मेरु-पृष्ठ ऋषिः, सुतलं छन्दः, कूर्मो देवता, आसनोपवेशने विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—मेरुपृष्ठ-ऋषये नमः शिरसि, सुतलं-छन्दसे नमः मुखे, कूर्म-देवतायै नमः हृदि, आसनोपवेशने विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

उक्त प्रकार से 'न्यास' करने के बाद हाथ जोड़कर 'प्रार्थना' करें। यथा—

ॐ पृथ्वि! त्वया धृता लोका, देवि! त्वं विष्णुना धृता। त्वं च धारय मां नित्यं, पवित्रं कुरु चासनम् ।।

( ५ ) इसके बाद निम्न-लिखित चार मन्त्रों द्वारा 'आत्म-शोधन' करें। यथा—

ॐ ऐं आत्म-तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा । ॐ ह्रीं विद्या-तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।। ॐ क्लीं शिव-तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं सर्व-तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।।

( ६ ) **गुरु-पूजन**—'आत्म-शोधन' के पश्चात् 'प्राणायाम' करके अपने सम्मुख 'दीपक' प्रज्वलित कर 'गुरु-देव' का स्मरण करें। यथा-

ॐ आनन्दमानन्द-करं प्रसन्नं, ज्ञान-स्वरूपं निज-बोध-रूपम् ।
योगीन्द्रमीड्यं भव-रोग-वैद्यं, श्रीमद्-गुरुं नित्यमऽहं नमामि।।

उक्त प्रकार ध्यान करके 'मानसोपचारों' द्वारा 'गुरु-पूजन' करें। यथा—

ॐ गुं गुरुभ्यो नमः लं पृथिव्यात्मकं गन्धं परिकल्पयामि। ॐ गुं गुरुभ्यो नमः हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि। ॐ गुं गुरुभ्यो नमः यं वाय्वात्मकं धूपं घ्रापयामि। ॐ गुं गुरुभ्यो नमः रं वह्न्यात्मकं दीपं सन्दर्शयामि। ॐ गुं गुरुभ्यो नमः वं अमृतात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि। ॐ गुं गुरुभ्यो नमः सं सर्वात्मकं ताम्बूलं कल्पयामि।।

( ७ ) **गणेश-पूजन**—इसके बाद 'गणपति' का पूजन करें-

ॐ गजाननं भूत-गणाधि-सेवितं, कपित्थ-जम्बू-फल-चारु-भक्षणम् ।
उमा-सुतं शोक-विनाश-कारकं, नमामि विघ्नेश्वर-पाद-पङ्कजम् ।।

ॐ वक्र-तुण्ड! महा-काय!, सूर्य-कोटि-सम-प्रभ!। निर्विघ्नं कुरु मे देव!, सर्व-कार्येषु सर्वदा।।

वासन्तिक नवरात्र, 'शोभन' संवत् २०६७ विक्रमी (मङ्गलवार, १६ मार्च २०१०)
**पर्व-पत्र एवं सप्त-दिवसीय श्रीललिता-सप्तशती-पाठ-क्रम**

**चैत्र शुक्ला प्रतिपदा** (१६-३-२०१०) : **'कलश'- स्थापना, 'सम्पुटित सप्तशती' के अध्याय १** का पाठ।
**चैत्र शुक्ला द्वितीया** (१७-३-२०१०) : **'सम्पुटित सप्तशती' के अध्याय २-३** का पाठ।
**चैत्र शुक्ला तृतीया** (१८-३-२०१०) : **श्रीललिता-व्रत-पूजा, 'सम्पुटित सप्तशती' के अध्याय ४** का पाठ।
**चैत्र शुक्ला चतुर्थी** (१९-३-२०१०) : **श्रीगणेश-चतुर्थी-व्रत-पूजा, अध्याय ५-६-७-८** का पाठ।
**चैत्र शुक्ला पञ्चमी** (२०-३-२०१०) : **श्रीलक्ष्मी-व्रत-पूजा, अध्याय ९-१०** का पाठ।
**चैत्र शुक्ला षष्ठी** (२१-३-२०१०) : **श्रीस्कन्द-पूजा, अध्याय ११** का पाठ।
**चैत्र शुक्ला सप्तमी** (२२-३-२०१०) : **श्रीअन्न-पूर्णा-पूजा, अध्याय १२-१३** का पाठ।
**चैत्र शुक्ला अष्टमी** (२३-३-२०१०) : **श्रीदुर्गा-अष्टमी-व्रत-पूजा,**
**पञ्च-दशाक्षर-मन्त्र-जप-पूर्वक महा-निशा-पूजन।**
**चैत्र शुक्ला नवमी** (२४-३-२०१०) : **श्रीराम-नवमी, श्रीतारा-जयन्ती,**
**पञ्च-दशाक्षर-मन्त्र-जप-पूर्वक हवन** (नवमी रात्रि ९-२८ तक)।
**चैत्र शुक्ला दशमी** (२५-३-२०१०) : **प्रातः नवरात्र-व्रत-पारण।**

(८) **सङ्कल्प**–इसके पश्चात् अपने अभीष्ट कर्म के अनुसार '**सङ्कल्प**' करें। यथा–

'**दाहिने हाथ**' में **कुश, तिल, तुलसी, हरीतकी-फल** (**हल्दी की गाँठ**) और '**पञ्च-पात्र**' से जल लेकर, **दाएँ घुटने के बल, उत्तर की ओर मुख करके बैठे** और निम्न प्रकार से **त्रि-कूटों** (**पञ्चदशी-मन्त्र**) से सम्पुटित '**श्रीदुर्गा-सप्तशती**' के पाठ करने का **सङ्कल्प** करें। यथा–

ॐ **तत् सत्** (ब्रह्म ही एक-मात्र सत्य है), **अद्यैतस्य** (आज इस), **ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीय-प्रहरार्द्धे** (ब्रह्मा के प्रथम दिवस के दूसरे पहर में), **श्रीश्वेत-वराह-कल्पे** (श्रीश्वेत-वराह नामक कल्प में), **जम्बू-द्वीपे** (जम्बू नामक द्वीप में), **भरत-खण्डे** (भरत के भू-खण्ड में), **आर्यावर्त्त-देशे** (आर्यावर्त्त नामक देश में), **अमुक पुण्य-क्षेत्रे** (अमुक पवित्र क्षेत्र में), **अमुक-प्रदेशे** (अमुक प्रदेश में), **अमुक-जनपदे** (अमुक जिले में), **अमुक-स्थाने** (अमुक स्थान में), **अमुक-संवत्सरे** (अमुक संवत्सर में), **अमुक-मासे** (अमुक मास में), **अमुक-पक्षे** (अमुक पक्ष में), **अमुक-तिथौ** (अमुक तिथि में), **अमुक-वासरे** (अमुक दिवस में), **अमुक-गोत्रोत्पन्नो** (अमुक गोत्र में उत्पन्न), **अमुक-नाम-शर्मा-वर्मा-दास** (अमुक नामवाला शर्मा, वर्मा, दास), **जगज्जननी आदि-विद्या श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-देवता-प्रीति-पूर्वक सर्वाभीष्ट-सिद्ध्यर्थं** (जगज्जननी आदि-विद्या श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती की प्रसन्नता-पूर्वक सभी कामनाओं के सिद्धि के लिए), **त्रि-कूट-पञ्च-दशी-मनुना-सम्पुटित श्रीचण्डी-पाठं सभक्त्याऽहं करिष्ये** (त्रि-कूट-पञ्च-दशी-मन्त्र-सम्पुटित श्रीचण्डी-पाठ का मैं भक्ति-पूर्वक पाठ करूँगा)।

(९) **त्रि-कूट-पञ्च-दशी-मन्त्र का विनियोगादि**–उक्त प्रकार से **सङ्कल्प** करने के बाद **त्रि-कूट-पञ्च-दशी-मन्त्र का विनियोगादि करना चाहिए। यथा–**

विनियोग–ॐ **अस्य श्रीललिता-महा-त्रिपुर-सुन्दरी-मन्त्रस्य श्रीदक्षिणामूर्ति ऋषिः, पंक्तिः छन्दः, श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी देवता, ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' बीजं, सौः 'स-क-ल-ह्रीं' शक्तिः,**

क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' कीलकं, सर्वाभीष्ट-सिद्ध्यर्थे चतुर्वर्गाप्तये च जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—शिरसि श्रीदक्षिणामूर्ति-ऋषये नमः, मुखे पंक्तिश्छन्दसे नमः, हृदि श्रीललिता-त्रिपुर-सुन्दरी-देवतायै नमः, गुह्ये ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं'-बीजाय नमः, पादयोः सौः 'स-क-ल-ह्रीं'-शक्तये नमः, सर्वाङ्गे क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' कीलकाय नमः, सर्वाभीष्ट-सिद्ध्यर्थे चतुर्वर्गाप्तये च जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

कराङ्ग-न्यास—ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' अंगुष्ठाभ्यां नमः, क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' तर्जनीभ्यां नमः, सौः 'स-क-ल-ह्रीं' मध्यमाभ्यां नमः, ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' अनामिकाभ्यां नमः, क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' कनिष्ठाभ्यां नमः, सौः 'स-क-ल-ह्रीं' करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

षडङ्ग-न्यास— ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' हृदयाय नमः, क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' शिरसे स्वाहा, सौः 'स-क-ल-ह्रीं' शिखायै वषट्, ऐं 'क-ए-ई-ल-ह्रीं' कवचाय हुम्, क्लीं 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' नेत्र-त्रयाय वौषट्, सौः 'स-क-ल-ह्रीं' अस्त्राय फट्।

ध्यान—विनियोगादि करने के बाद जगज्जननी भगवती श्रीललिता का ध्यान करना चाहिए—

चतुर्भुजे चन्द्र-कलावतंसे, कुचोन्नते! कुंकुम-राग-शोणे!।
पुण्ड्रेक्षु-पाशांकुश-पुष्प-बाण-हस्ते! नमस्ते जगदेक-मातः!।।१

कुंकुम - पङ्क - समाभामंकुश - पाशेक्षु - कुसुम - शरम्।
पङ्कज-मध्य-निषण्णां पङ्केरुह-लोचनां परां वन्दे।।२

मानस-पूजन—उक्त प्रकार से ध्यान करने के बाद भगवती श्रीललिता का मानसिक पूजन करना चाहिए। यथा—ॐ लं पृथ्वी-तत्त्वात्मकं गन्धं श्रीललिताम्बा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं श्रीललिताम्बा-प्रीतये समर्पयामि नमः। ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं श्रीललिताम्बा-प्रीतये घ्रापयामि नमः। ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं श्रीललिताम्बा-प्रीतये दर्शयामि नमः। ॐ वं जलं-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीललिताम्बा-प्रीतये निवेदयामि नमः। ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं श्रीललिताम्बा-प्रीतये समर्पयामि नमः।

(१०) मन्त्र-जप—मानस-पूजन करने के बाद भगवती श्रीललिता के त्रि-कूटों (पञ्च-दशाक्षर मन्त्र) का जप अर्थ को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए।

मन्त्र—'क-ए-ई-ल-ह्रीं' (वाग्भव-कूट) 'ह-स-क-ह-ल-ह्रीं' (कामराज-कूट) 'स-क-ल-ह्रीं' (शक्ति-कूट)। (पन्द्रह अक्षर)।

(११) सम्पुटित-पाठ—उक्त प्रकार से यथा-शक्ति 'जप' करने के बाद अपने सम्मुख पहले से प्रज्वलित 'दीपक' की ज्योति में आदि-विद्या भगवती श्रीललिता का ध्यान करते हुए, हाथ जोड़कर 'कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्० श्लोक पढ़ते हुए तीनों कूटों से सम्पुटित श्रीदुर्गा-सप्तशती के तेरह अध्यायों (७०० मन्त्रों) का पाठ करना चाहिए।

यदि एक दिन में सभी तेरह अध्यायों (७०० मन्त्रों) का 'पाठ' करना सम्भव न हो, तो 'पाठोऽयं वर-कारः'-सूत्रानुसार सात दिनों में तेरह अध्यायों (७०० मन्त्रों) का 'पाठ' करना चाहिए।

'पाठ' की समाप्ति के बाद एक बार पुनः 'त्रि-कूट-पञ्च-दशी-मन्त्र का विनियोगादि' कर यथा-शक्ति 'जप' करना चाहिए तथा 'क्षमा-प्रार्थना' एवं 'पाठ-समर्पण' करना चाहिए।



# प्रथमः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ॐ मार्कण्डेय उवाच।।१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सावर्णिः सूर्य-तनयो, यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः।
निशामय तदुत्पत्तिं, विस्तराद् गदतो मम।।२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

महा-मायाऽनुभावेन, यथा मन्वन्तराधिपः।
स बभूव महा-भागः, सावर्णिस्तनयो रवेः।।३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं, चैत्र-वंश-समुद्भवः।
सुरथो नाम राजाऽभूत्, समस्ते क्षिति-मण्डले।।४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तस्य पालयतः सम्यक्, प्रजाः पुत्रानिवौरसान्।
बभूवुः शत्रवो भूपाः, कोला-विध्वंसिनस्तदा।।५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तस्य तैरभवद् युद्धमति - प्रबल - दण्डिनः।
न्यूनैरपि स तैर्युद्धे, कोला-विध्वंसिभिर्जितः।।६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततः स्व-पुरमायातो, निज-देशाधिपोऽभवत्।
आक्रान्तः स महा-भागस्तैस्तदा प्रबलारिभिः।।७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अमात्यैर्बलिभिर्दुष्टैर्दुर्बलस्य दुरात्मभिः।
कोषो बलं चापहृतं, तत्रापि स्व-पुरे ततः।।८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततो मृगया-व्याजेन, हृत-स्वाम्यः स भू-पतिः।
एकाकी हयमारुह्य, जगाम गहनं वनम्।।९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

स तत्राश्रममद्राक्षीद्, द्विज-वर्यस्य मेधसः।
प्रशान्त-श्वापदाकीर्णं, मुनि-शिष्योप-शोभितम्।।१०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तस्थौ कञ्चित् स कालं च, मुनिना तेन सत्कृतः।
इतश्चेतश्च विचरंस्तस्मिन् मुनि-वराश्रमे।।११

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सोऽचिन्तयत् तदा तत्र, ममत्वाकृष्ट-चेतनः।।१२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

मत्पूर्वैः पालितं पूर्वं, मया हीनं पुरं हि तत्।
मद्-भृत्यैस्तैरसद्-वृत्तैर्धर्मतः पाल्यते न वा।।१३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
न जाने स प्रधानो मे, शूर-हस्ती सदा-मदः।
मम वैरि-वशं यातः, कान् भोगानुप-लप्स्यते।।१४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ये ममानुगता नित्यं, प्रसाद - धन - भोजनैः।
अनुवृत्तिं ध्रुवं तेऽद्य, कुर्वन्त्यन्य-मही-भृताम्।।१५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
असम्यग्-व्यय-शीलैस्तैः, कुर्वद्भिः सततं व्ययम्।
सञ्चितः सोऽति-दुःखेन, क्षयं कोषो गमिष्यति।।१६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एतच्चान्यच्च सततं, चिन्तयामास पार्थिवः।
तत्र विप्राश्रमाभ्यासे, वैश्यमेकं ददर्श सः।।१७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स पृष्टस्तेन कस्त्वं भो! हेतुश्चागमनेऽत्र कः।
स-शोक इव कस्मात् त्वं, दुर्मना इव लक्ष्यसे।।१८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
इत्याकर्ण्य वचस्तस्य, भू-पतेः प्रणयोदितम्।
प्रत्युवाच स तं वैश्यः, प्रश्रयावनतो नृपम्।।१९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
वैश्य उवाच ।। २० ।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
समाधिर्नाम वैश्योऽहमुत्पन्नो धनिनां कुले।
पुत्र - दारैर्निरस्तश्च, धन - लोभादसाधुभिः।।२१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
विहीनश्च धनैर्दारैः, पुत्रैरादाय मे धनम्।
वनमभ्यागतो दुःखी, निरस्तश्चाप्त-बन्धुभिः।।२२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सोऽहं न वेद्मि पुत्राणां, कुशलाकुशलात्मिकाम्।
प्रवृत्तिं स्व-जनानां च, दाराणां चात्र संस्थितः।।२३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
किं तु तेषां गृहे क्षेममक्षेमं किं नु साम्प्रतम्।।२४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
कथं ते किं नु सद्-वृत्ताः, दुर्वृत्ताः किं नु मे सुताः।।२५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
राजोवाच ।।२६।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
यैर्निरस्तो भवाँल्लुब्धैः, पुत्र-दारादिभिर्धनैः।।२७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तेषु किं भवतः स्नेहमनुबध्नाति मानसम्।।२८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वैश्य उवाच ।।२९।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एवमेतद् यथा प्राह, भवानस्मद्-गतं वचः।

किं करोमि न बध्नाति, मम निष्ठुरतां मनः।।३०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यैः सन्त्यज्य पितृ-स्नेहं, धन-लुब्धैर्निराकृतः।

पति-स्वजन-हार्दं च, हार्दि तेष्वेव मे मनः।।३१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

किमेतन्नाभि-जानामि, जानन्नपि महा-मते!

यत् प्रेम-प्रवणं चित्तं, विगुणेष्वपि बन्धुषु।।३२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तेषां कृते मे निःश्वासो, दौर्मनस्यं च जायते।।३३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

करोमि किं यन्न मनस्तेष्वप्रीतिषु निष्ठुरम्।।३४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

मार्कण्डेय उवाच।।३५।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततस्तौ सहितौ विप्र! तं मुनिं समुपस्थितौ।।३६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

समाधिर्नाम वैश्योऽसौ, स च पार्थिव-सत्तमः।

कृत्वा तु तौ यथा-न्यायं, यथार्हं तेन संविदम्।।३७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

उपविष्टौ कथाः काश्चिच्चक्रतुर्वैश्य-पार्थिवौ।।३८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

राजोवाच।।३९।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

भगवंस्त्वामहं प्रष्टुमिच्छाम्येकं वदस्व तत्।

दुःखाय यन्मे मनसः, स्व-चित्तायत्ततां विना।।४०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ममत्वं गत-राज्यस्य, राज्याङ्गेष्वखिलेष्वपि।

जानतोऽपि यथाऽज्ञस्य, किमेतन्मुनि-सत्तम?।।४१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अयं च निकृतः पुत्रैर्दारैर्भृत्यैस्तथोज्झितः।

स्व-जनेन च सन्त्यक्तस्तेषु हार्दी तथाप्यति।।४२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एवमेष तथाऽहं च, द्वावप्यत्यन्त-दुःखितौ।

दृष्ट-दोषेऽपि विषये, ममत्वाकृष्ट-मानसौ।।४३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तत् केनैतन्महा-भाग!यन्मोहो ज्ञानिनोरपि?।।४४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ममास्य च भवत्येषाऽविवेकान्धस्य मूढता।।४५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच ।।४६।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ज्ञानमस्ति समस्तस्य, जन्तोर्विषय-गोचरे।

विषयश्च महा-भाग! याति चैवं पृथक् पृथक्।।४७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दिवान्धाः प्राणिनः केचिद्, रात्रावन्धास्तथाऽपरे।

केचिद् दिवा तथा रात्रौ, प्राणिनस्तुल्य-दृष्टयः।।४८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ज्ञानिनो मनुजाः सत्यं, किन्तु ते नहि केवलम्।

यतो हि ज्ञानिनः सर्वे, पशु-पक्षि-मृगादयः।।४९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ज्ञानं च तन्मनुष्याणां, यत् तेषां मृग-पक्षिणाम्।

मनुष्याणां च यत् तेषां, तुल्यमन्यत् तथोभयोः।।५०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ज्ञानेऽपि सति पश्यैतान्, पतङ्गाञ्छाव-चञ्चुषु।
कण-मोक्षाद् ऋतान्मोहात्, पीड्यमानानपि क्षुधा।।५१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

मानुषा मनुज-व्याघ्र! साभिलाषाः सुतान् प्रति।
लोभात् प्रत्युपकाराय, नन्वेते किं न पश्यसि?।।५२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तथापि ममतावर्ते, मोह - गर्ते निपातिताः।
महा-माया-प्रभावेण, संसार-स्थिति-कारिणः।।५३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तन्नात्र विस्मयः कार्यो, योग-निद्रा जगत्-पतेः।
महा-माया हरेश्चैतत्, तया सम्मोह्यते जगत्।।५४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ज्ञानिनामपि चेतांसि, देवी भगवती हि सा।
बलादाकृष्य मोहाय, महा-माया प्रयच्छति।।५५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तया विसृज्यते विश्वं, जगदेतच्चराचरम्।
सैषा प्रसन्ना वरदा, नृणां भवति मुक्तये।।५६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतु-भूता सनातनी।।५७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

संसार-बन्ध-हेतुश्च, सैव सर्वेश्वरेश्वरी।।५८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

राजोवाच।।५९।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

भगवन्! का हि सा देवी, महा-मायेति यां भवान्।

ब्रवीति कथमुत्पन्ना, सा कर्मास्याश्च किं द्विज?।।६०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यत्-स्वभावा च सा देवी, यत्-स्वरूपा यदुद्भवा।।६१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तत् सर्वं श्रोतुमिच्छामि, त्वत्तो ब्रह्म-विदां वर!।।६२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच।।६३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्वमिदं ततम्।।६४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तथापि तत्-समुत्पत्तिर्बहुधा श्रूयतां मम।।६५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देवानां कार्य-सिद्ध्यर्थमाविर्भवति सा यदा।
उत्पन्नेति तदा लोके, सा नित्याऽप्यभिधीयते।।६६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

योग - निद्रां यदा विष्णुर्जगत्येकार्णवी - कृते।
आस्तीर्य शेषमभजत्, कल्पान्ते भगवान् प्रभुः।।६७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तदा द्वावसुरौ घोरौ, विख्यातौ मधु-कैटभौ।
विष्णु-कर्ण-मलोद्भूतौ, हन्तुं ब्रह्माणमुद्यतौ।।६८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

स नाभि-कमले विष्णोः, स्थितो ब्रह्मा प्रजापतिः।
दृष्ट्वा तावसुरौ चोग्रौ, प्रसुप्तं च जनार्दनम्।।६९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तुष्टाव योग-निद्रां तामेकाग्र-हृदय-स्थितः।
विबोधनार्थाय हरेर्हरि-नेत्र-कृतालयाम्।।७०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ब्रह्मोवाच ।।७१।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं, स्थिति-संहार-कारिणीं।
स्तौमि निद्रां भगवतीं, विष्णोरतुल-तेजसः।।७२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि, वषट्कार-स्वरात्मिका।।७३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सुधा त्वमक्षरे नित्ये! त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता।।७४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अर्ध-मात्रा-स्थिता नित्या, यानुच्चार्या विशेषतः।

त्वमेव सन्ध्या गायत्री, त्वं देवि! जननी परा।।७५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

त्वयैतद् धार्यते विश्वं, त्वयैतत् सृज्यते जगत्।

त्वयैतत् पाल्यते देवि! त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा।।७६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

विसृष्टौ सृष्टि-रूपा त्वं, स्थिति-रूपा च पालने।

तथा संहृति-रूपान्ते, जगतोऽस्य जगन्मये।।७७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

महा-विद्या महा-माया, महा-मेधा महा-स्मृतिः।

महा-मोहा च भवती, महा-देवी महाऽसुरी।।७८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य, गुण-त्रय-विभाविनी।

काल-रात्रिर्महा-रात्रिर्मोह-रात्रिश्च दारुणा।।७९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं, ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोध-लक्षणा।

लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च।।८०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

खड्गिनी शूलिनी घोरा, गदिनी चक्रिणी तथा।

शङ्खिनी चापिनी वाण-भुशुण्डी-परिघायुधा।।८१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सौम्या सौम्य-तराऽशेष-सौम्येभ्यस्त्वति-सुन्दरी।

पराऽपराणां परमा, त्वमेव परमेश्वरी।।८२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यच्च किञ्चित् क्वचिद् वस्तु, सदसद् वाऽखिलात्मिके!

तस्य सर्वस्य या शक्तिः, सा त्वं किं स्तूयसे तदा।।८३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यया त्वया जगत्-स्रष्टा, जगत्-पाताऽत्ति यो जगत्।

सोऽपि निद्रा-वशं नीतः, कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः।।८४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

विष्णुः शरीर - ग्रहणमहमीशान एव च।

कारितास्ते यतोऽतस्त्वां, कः स्तोतुं शक्ति-मान् भवेत्।।८५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि! संस्तुता।

मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधु - कैटभौ।।८६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

प्रबोधं स जगत्-स्वामी, नीयतामच्युतो लघु।

बोधश्च क्रियतामस्य, हन्तुमेतौ महाऽसुरौ।।८७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच ।।८८।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एवं स्तुता तदा देवी, तामसी तत्र वेधसा।

विष्णोः प्रबोधनार्थाय, निहन्तुं मधु-कैटभौ।।८९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

नेत्रास्य-नासिका-बाहु-हृदयेभ्यस्तथोरसः।

निर्गम्य दर्शने तस्थौ, ब्रह्मणोऽव्यक्त-जन्मनः।।९०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

उत्तस्थौ च जगन्नाथस्तया मुक्तो जनार्दनः।

एकार्णवेऽहि-शयनात्, ततः स ददृशे च तौ।।९१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

मधु - कैटभौ दुरात्मानावति - वीर्य - पराक्रमौ।

क्रोध-रक्तेक्षणावत्तुं, ब्रह्माणं जनितोद्यमौ।।९२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

समुत्थाय ततस्ताभ्यां, युयुधे भगवान् हरिः।

पञ्च-वर्ष-सहस्राणि, बाहु-प्रहरणो विभुः।।९३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तावप्यति-बलोन्मत्तौ, महा-माया-विमोहितौ।।९४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

उक्त-वन्तौ वरोऽस्मत्तो, व्रियतामिति केशवम्।।९५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

भगवानुवाच ।।९६।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

भवेतामद्य मे तुष्टौ, मम वध्यावुभावपि।।९७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

किमन्येन वरेणात्र, एतावद्धि वृतं मम।।९८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच ।।९९।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वञ्चिताभ्यामिति तदा, सर्वमापो-मयं जगत्।

विलोक्य ताभ्यां गदितो, भगवान् कमलेक्षणः।।१००

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

आवां जहि न यत्रोर्वी, सलिलेन परिप्लुता।।१०१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच।।१०२।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तथेत्युक्त्वा भगवता, शङ्ख-चक्र-गदा-भृता।
कृत्वा चक्रेण वै च्छिन्ने, जघने शिरसी तयोः।।१०३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एवमेषा समुत्पन्ना, ब्रह्मणा संस्तुता स्वयम्।
प्रभावमस्या देव्यास्तु, भूयः श्रृणु वदामि ते ।।१०४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वन्दे श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्!
वन्दे जगन्मोहिनीम्!
वन्दे सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्!
वन्दे सर्व-परां शिवां श्रीराज-राजेश्वरीम्!

## द्वितीयः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ॐ ऋषिरुवाच ।।१०५।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
देवासुरमभूद् युद्धं, पूर्णमब्द-शतं पुरा।
महिषेऽसुराणामधिपे, देवानां च पुरन्दरे।।१०६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तत्रासुरैर्महा - वीर्यैर्देव - सैन्यं पराजितम्।
जित्वा च सकलान् देवानिन्द्रोऽभून्महिषासुरः।।१०७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः पराजिता देवाः, पद्म-योनिं प्रजा-पतिम्।
पुरस्कृत्य गतास्तत्र, यत्रेश-गरुड-ध्वजौ।।१०८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
यथा-वृत्तं तयोस्तद्-वन्महिषासुर-चेष्टितम्।
त्रिदशाः कथयामासुर्देवाभि-भव-विस्तरम्।।१०९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सूर्येन्द्राग्न्यनिलेन्दूनां, यमस्य वरुणस्य च।
अन्येषां चाधिकारान् स, स्वयमेवाधि-तिष्ठति।।११०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

स्वर्गान्निराकृताः सर्वे, तेन देव-गणा भुवि।
विचरन्ति यथा मर्त्या, महिषेण दुरात्मना।।१११

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एतद् वः कथितं सर्वममरारि-विचेष्टितम्।
शरणं च प्रपन्नाः स्मो, वधस्तस्य विचिन्त्यताम्।।११२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

इत्थं निशम्य देवानां, वचांसि मधु-सूदनः।
चकार कोपं शम्भुश्च, भ्रकुटी-कुटिलाननौ।।११३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततोऽति-कोप-पूर्णस्य, चक्रिणो वदनात् ततः।
निश्चक्राम महत् तेजो, ब्रह्मणः शङ्करस्य च।।११४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अन्येषां चैव देवानां, शक्रादीनां शरीरतः।
निर्गतं सु-महत् तेजस्तच्चैक्यं समगच्छत।।११५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अतीव - तेजसः कूटं, ज्वलन्तमिव पर्वतम्।
ददृशुस्ते सुरास्तत्र, ज्वाला-व्याप्त-दिगन्तरम्।।११६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अतुलं तत्र तत् तेजः, सर्व-देव-शरीरजम्।
एकस्थं तदभून्नारी, व्याप्त-लोक-त्रयं त्विषा।।११७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यदभूच्छाम्भवं तेजस्तेनाजायत तन्मुखम्।
याम्येन चाभवन् केशा, बाहवो विष्णु-तेजसा।।११८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सौम्येन स्तनयोर्युग्मं, मध्यं चैन्द्रेण चाभवत्।
वारुणेन च जङ्घोरू, नितम्बस्तेजसा भुवः।।११९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ब्रह्मणस्तेजसा पादौ, तदंगुलयोऽर्क-तेजसा।
वसूनां च करांगुल्यः, कौबेरेण च नासिका।।१२०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तस्यास्तु दन्ताः सम्भूताः, प्राजापत्येन तेजसा।
नयन-त्रितयं जज्ञे, तथा पावक-तेजसा।।१२१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

भ्रुवौ च सन्ध्ययोस्तेजः, श्रवणावनिलस्य च।
अन्येषां चैव देवानां, सम्भवस्तेजसां शिवा।।१२२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततः समस्त-देवानां, तेजो-राशि-समुद्भवाम्।
तां विलोक्य मुदं प्रापुरमरा महिषार्दिताः।।१२३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

शूलं शूलाद् विनिष्कृष्य, ददौ तस्यै पिनाक-धृक्।
चक्रं च दत्तवान् कृष्णः, समुत्पाद्य स्व-चक्रतः।।१२४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

शङ्खं च वरुणः शक्तिं, ददौ तस्यै हुताशनः।
मारुतो दत्त-वांश्चापं, बाण-पूर्णे तथेषुधी।।१२५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वज्रमिन्द्रः समुत्पाद्य, कुलिशादमराधिपः।
ददौ तस्यै सहस्राक्षो, घण्टामैरावताद् गजात्।।१२६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

काल-दण्डाद् यमो दण्डं, पाशं चाम्बु-पतिर्ददौ।
प्रजापतिश्चाक्ष-मालां, ददौ ब्रह्मा कमण्डलुम्।।१२७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

समस्त-रोम-कूपेषु, निज-रश्मीन् दिवाकरः।
कालश्च दत्त-वान् खड्गं, तस्याश्चर्म च निर्मलम्।।१२८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क्षीरोदश्चामलं हारमजरे च तथाऽम्बरे।
चूडा-मणिं तथा दिव्यं, कुण्डले कटकानि च।।१२९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अर्ध-चन्द्रं तथा शुभ्रं, केयूरान् सर्व-बाहुषु।
नूपुरौ विमलौ तद्-वद्, ग्रैवेयकमनुत्तमम्।।१३०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अंगुलीयक-रत्नानि, समस्तास्वंगुलीषु च।
विश्व-कर्मा ददौ तस्यै, परशुं चाति-निर्मलम्।।१३१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तुष्टुवुर्मुनयश्चैनां, भक्ति-नम्रात्म-मूर्तयः।
दृष्ट्वा समस्तं संक्षुब्धं, त्रैलोक्यममरारयः।।१३९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सन्नद्धाखिल-सैन्यास्ते, समुत्तस्थुरुदायुधाः।
आः किमेतदिति क्रोधादाभाष्य महिषासुरः।।१४०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
अभ्यधावत तं शब्दमशेषैरसुरैर्वृतः।
स ददर्श ततो देवीं, व्याप्त-लोक-त्रयां त्विषा।।१४१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
पादाक्रान्त्या नत-भुवं, किरीटोल्लिखिताम्बराम्।
क्षोभिताशेष-पातालां, धनुर्ज्या-निःस्वनेन ताम्।।१४२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
दिशो भुज-सहस्रेण, समन्ताद् व्याप्य संस्थिताम्।
ततः प्रववृते युद्धं, तया देव्या सुर-द्विषाम्।।१४३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शस्त्रास्त्रैर्बहुधा मुक्तैरादीपित-दिगन्तरम्।
महिषासुर-सेनानीश्चिक्षुराख्यो महाऽसुरः।।१४४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
युयुधे चामरश्चान्यैश्चतुरङ्ग-बलान्वितः।
रथानामयुतैः षड्भिरुदग्राख्यो महाऽसुरः।।१४५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अयुध्यतायुतानां च, सहस्रेण महा-हनुः।
पञ्चाशद्भिश्च नियुतैरसिलोमा महाऽसुरः।।१४६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अयुतानां शतैः षड्भिर्बाष्कलो युयुधे रणे।
गज - वाजि - सहस्रौघैरनेकैः परिवारितः।।१४७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वृतो रथानां कोट्या च, युद्धे तस्मिन्नयुध्यत।
बिडालाख्योऽयुतानां च, पञ्चाशद्भि रथायुतैः।।१४८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

युयुधे संयुगे तत्र, रथानां परिवारितः।
अन्ये च तत्रायुतशो, रथ-नाग-हयैर्वृताः।।१४९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

युयुधुः संयुगे देव्या, सह तत्र महाऽसुराः।
कोटि-कोटि-सहस्रैस्तु, रथानां दन्तिनां तथा।।१५०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

हयानां च वृतो युद्धे, तत्राभून्महिषासुरः।
तोमरैर्भिन्दिपालैश्च, शक्तिभिर्मुसलैस्तथा।।१५१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

युयुधुः संयुगे देव्या, खड्गैः परशु-पट्टिशैः।
केचिच्च चिक्षिपुः शक्तीः, केचित् पाशांस्तथाऽपरे।।१५२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
देवीं खड्ग-प्रहारैस्तु, ते तां हन्तुं प्रचक्रमुः।
साऽपि देवी ततस्तानि, शस्त्राण्यस्त्राणि चण्डिका।।१५३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
लीलयैव प्रचिच्छेद, निज-शस्त्रास्त्र-वर्षिणी।
अनायस्तानना देवी, स्तूयमाना सुरर्षिभिः।।१५४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मुमोचासुर-देहेषु, शस्त्राण्यस्त्राणि चेश्वरी।
सोऽपि क्रुद्धो धुत-सटो, देव्या वाहन-केशरी।।१५५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चचारासुर-सैन्येषु, वनेष्विव हुताशनः।
निःश्वासान् मुमुचे यांश्च, युध्यमाना रणेऽम्बिका।।१५६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
त एव सद्यः सम्भूता, गणाः शत-सहस्रशः।
युयुधुस्ते परशुभिर्भिन्दिपालासि - पट्टिशैः।।१५७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
नाशयन्तोऽसुर-गणान्, देवी-शक्त्युपबृंहिताः।
अवादयन्त पटहान्, गणाः शङ्खांस्तथाऽपरे।१५८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
मृदङ्गांश्च तथैवान्ये, तस्मिन् युद्ध-महोत्सवे।
ततो देवी त्रिशूलेन, गदया शक्ति-वृष्टिभिः।।१५९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
खड्गादिभिश्च शतशो, निजघान महाऽसुरान्।
पातयामास चैवान्यान्, घण्टा-स्वन-विमोहितान्।।१६०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
असुरान् भुवि पाशेन, बद्ध्वा चान्यानकर्षयत्।
केचिद् द्विधा कृतास्तीक्ष्णैः, खड्ग-पातैस्तथाऽपरे।।१६१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
विपोथिता निपातेन, गदया भुवि शेरते।
वेमुश्च केचिद् रुधिरं, मुसलेन भृशं हताः।।१६२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
केचिन्निपतिता भूमौ, भिन्नाः शूलेन वक्षसि।
निरन्तराः शरौघेण, कृताः केचिद् रणाजिरे।।१६३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
श्येनानुकारिणः प्राणान्, मुमुचुस्त्रिदशार्दनाः।
केषांचिद् बाहवश्छिन्नाश्छिन्न-ग्रीवास्तथाऽपरे।।१६४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
शिरांसि पेतुरन्येषामन्ये मध्ये विदारिताः।
विच्छिन्न-जङ्घास्त्वपरे, पेतुरुर्व्यां महाऽसुराः।।१६५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एक-बाह्वक्षि-चरणाः, केचिद् देव्या द्विधा कृताः।
छिन्नेऽपि चान्ये शिरसि, पतिताः पुनरुत्थिताः।।१६६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

कबन्धा युयुधुर्देव्या, गृहीत-परमायुधाः।
ननृतुश्चापरे तत्र, युद्धे तूर्य-लयाश्रिताः।।१६७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

कबन्धाश्छिन्न-शिरसः, खड्ग-शक्त्यृष्टि-पाणयः।
तिष्ठ तिष्ठेति भाषन्तो, देवीमन्ये महाऽसुराः।।१६८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

पातितै रथ - नागाश्वैरसुरैश्च वसुन्धरा।
अगम्या साऽभवत् तत्र, यत्राऽभूत् स महा-रणः।।१६९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

शोणितौघा महा - नद्यः, सद्यस्तत्र प्रसुस्रुवुः।
मध्ये चासुर-सैन्यस्य, वारणासुर-वाजिनाम्।।१७०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क्षणेन तन्महा-सैन्यमसुराणां तथाऽम्बिका।
निन्ये क्षयं यथा वह्निस्तृण-दारु-महा-चयम्।।१७१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

स च सिंहो महा-नादमुत्सृजन् धुत-केशरः।
शरीरेभ्योऽमरारीणामसूनिव विचिन्वति।।१७२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देव्या गणैश्च तैस्तत्र, कृतं युद्धं महाऽसुरैः।
यथैषां तुतुषुर्देवाः, पुष्प-वृष्टि-मुचो दिवि।।१७३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

# तृतीयः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ॐ ऋषिरुवाच ।।१७४।।
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
निहन्य-मानं तत्-सैन्यमवलोक्य महाऽसुरः।
सेनानीश्चिक्षुरः कोपाद्, ययौ योद्धुमथाम्बिकाम्।।१७५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स देवीं शर-वर्षेण, ववर्ष समरेऽसुरः।
यथा मेरु-गिरेः शृङ्गं, तोय-वर्षेण तोयदः।।१७६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्य च्छित्वा ततो देवी, लीलयैव शरोत्करान्।
जघान् तुरगान् वाणैर्यन्तारं चैव वाजिनाम्।।१७७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चिच्छेद च धनुः सद्यो, ध्वजं चाति-समुच्छ्रितम्।
विव्याध चैव गात्रेषु, छिन्न-धन्वानमाशुगैः।।१७८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
स च्छिन्न-धन्वा विरथो, हताश्वो हत-सारथिः।
अभ्यधावत तां देवीं, खड्ग-चर्म-धरोऽसुरः।।१७९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सिंहमाहत्य खड्गेन, तीक्ष्ण-धारेण मूर्धनि।
आजघान भुजे सव्ये, देवीमप्यति-वेग-वान्।।१८०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
तस्याः खड्गो भुजं प्राप्य, पफाल नृप-नन्दन!
ततो जग्राह शूलं स, कोपादरुण-लोचनः।।१८१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
चिक्षेप च ततस्तत् तु, भद्र-काल्यां महाऽसुरः।
जाज्वल्य-मानं तेजोभी, रवि-बिम्बमिवाम्बरात्।।१८२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
दृष्ट्वा तदापतच्छूलं, देवी शूलममुञ्चत।
तच्छूलं शतधा तेन, नीतं स च महाऽसुरः।।१८३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
हते तस्मिन् महा-वीर्ये, महिषस्य चमू-पतौ।
आजगाम गजारूढश्चामरस्त्रिदशार्दनः।।१८४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सोऽपि शक्तिं मुमोचाथ, देव्यास्तामम्बिका द्रुतम्।
हुङ्काराभि-हतां भूमौ, पातयामास निष्प्रभाम् ।।१८५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
भग्नां शक्तिं निपतितां, दृष्ट्वा क्रोध-समन्वितः।
चिक्षेप चामरः शूलं, बाणैस्तदपि साच्छिनत्।।१८६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततः सिंहः समुत्पत्य, गज-कुम्भान्तरे स्थितः।
बाहु-युद्धेन युयुधे, तेनोच्चैस्त्रिदशारिणा।।१८७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
युद्ध्यमानौ ततस्तौ तु, तस्मान्नागान् मही गतौ।
युयुधातेऽति-संरब्धौ, प्रहारैरति-दारुणैः।।१८८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
ततो वेगात् खमुत्पत्य, निपत्य च मृगारिणा।
कर-प्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक् कृतम्।।१८९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
उदग्रश्च रणे देव्या, शिला-वृक्षादिभिर्हतः।
दन्त-मुष्टि-तलैश्चैव, करालश्च निपातितः।।१९०
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
देवी क्रुद्धा गदा-पातैश्चूर्णयामास चोद्धतम्।
वाष्कलं भिन्दिपालेन, बाणैस्ताम्रं तथाऽन्धकम्।।१९१
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
उग्रास्यमुग्र - वीर्यं च, तथैव च महा - हनुम्।
त्रिनेत्रा च त्रिशूलेन, जघान परमेश्वरी।।१९२
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
विडालस्यासिना कायात्, पातयामास वै शिरः।
दुर्धरं दुर्मुखं चोभौ, शरैर्निन्ये यम-क्षयम्।।१९३
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
एवं संक्षीयमाणे तु, स्व - सैन्ये महिषासुरः।
माहिषेण स्वरूपेण, त्रासयामास तान् गणान्।।१९४
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
कांश्चित् तुण्ड-प्रहारेण, खुर-क्षेपैस्तथाऽपरान्।
लांगूल-ताडितांश्चान्याञ्छृङ्गाभ्यां च विदारितान्।।१९५
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
वेगेन कांश्चिदपरान्, नादेन भ्रमणेन च।
निःश्वास-पवनेनान्यान्, पातयामास भू-तले।।१९६
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
निपात्य प्रमथानीकमभ्यधावत सोऽसुरः।
सिंहं हन्तुं महा-देव्याः, कोपं चक्रे ततोऽम्बिका।।१९७
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
सोऽपि कोपान्महा-वीर्यः, खुर-क्षुण्ण-मही-तलः।
शृङ्गाभ्यां पर्वतानुच्चांश्चिक्षेप च ननाद च।।१९८
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
वेग-भ्रमण-विक्षुण्णा, मही तस्य व्यशीर्यत।
लांगूलेनाहतश्चाब्धिः, प्लावयामास सर्वतः।।१९९
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं
धुत-शृङ्ग-विभिन्नाश्च, खण्डं खण्डं ययुर्घनाः।
श्वासानिलास्ताः शतशो, निपेतुर्नभसोऽचलाः।।२००
क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

इति क्रोध - समाध्मातमापतन्तं महाऽसुरम्।
दृष्ट्वा सा चण्डिका कोपं, तद्-बधाय तदाऽकरोत्।।२०१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सा क्षिप्त्वा तस्य वै पाशं, तं बबन्ध महाऽसुरम्।
तत्याज माहिषं रूपं, सोऽपि बद्धो महा-मृधे।।२०२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततः सिंहोऽभवत् सद्यो, यावत् तस्याम्बिका शिरः।
छिनत्ति तावत् पुरुषः, खड्ग-पाणिरदृश्यत।।२०३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तत एवाशु पुरुषं, देवी चिच्छेद सायकैः।
तं खड्ग-चर्मणा सार्धं, ततः सोऽभून्महा-गजः।।२०४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

करेण च महा - सिंहं, तं चकर्ष जगर्ज च।
कर्षतस्तु करं देवी, खड्गेन निरकृन्तत।।२०५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततो महाऽसुरो भूयो, माहिषं वपुरास्थितः।
तथैव क्षोभयामास, त्रैलोक्यं स-चराचरम्।।२०६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततः क्रुद्धा जगन्माता, चण्डिका पानमुत्तमम्।
पपौ पुनः पुनश्चैव, जहासारुण-लोचना।।२०७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ननर्द चासुरः सोऽपि, बल-वीर्य-मदोद्धतः।
विषाणाभ्यां च चिक्षेप, चण्डिकां प्रति भूधरान्।।२०८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सा च तान् प्रहितांस्तेन, चूर्णयन्ती शरोत्करैः।
उवाच तं मदोद्भूत-मुख-रागाकुलाक्षरम्।।२०९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देव्युवाच ।।२१०।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

गर्ज गर्ज क्षणं मूढ!, मधु यावत् पिबाम्यहम्।
मया त्वयि हतेऽत्रैव, गर्जिष्यन्त्याशु देवताः।।२११

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच ।।२१२।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एवमुक्त्वा समुत्पत्य, साऽऽरूढा तं महाऽसुरम्।
पादेनाक्रम्य कण्ठे च, शूलेनैनमताडयत्।।२१३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततः सोऽपि पदाक्रान्तस्तया निज-मुखात् ततः।
अर्ध-निष्क्रान्त एवासीद्, देव्या वीर्येण संवृतः।।२१४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

अर्ध-निष्क्रान्त एवासौ, युध्यमानो महाऽसुरः।
तया महाऽसिना देव्या, शिरश्छित्वा निपातितः।।२१५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ततो हाहा-कृतं सर्वं, दैत्य-सैन्यं ननाश तत्।
प्रहर्षं च परं जग्मुः, सकला देवता-गणाः।।२१६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

तुष्टुवुस्तां सुरा-देवीं, सह दिव्यैर्महर्षिभिः।
जगुर्गन्धर्व-पतयो, ननृतुश्चाप्सरो-गणाः।।२१७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वन्दे श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्!
वन्दे जगन्मोहिनीम्!
वन्दे सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्!
वन्दे सर्व-परां शिवां श्रीराज-राजेश्वरीम्!

# चतुर्थः अध्यायः

कल्याणीं परमेश्वरीं पर-शिवां श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्,
मीनाक्षीं ललिताम्बिकामनुदिनं वन्दे जगन्मोहिनीम् ।
चामुण्डां पर-देवतां सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्,
देवीं सर्व-परां शिवां शशि-निभां श्रीराज-राजेश्वरीम् ।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ॐ ऋषिरुवाच ।।२१८।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

शक्रादयः सुर-गणा, निहतेऽति-वीर्ये, तस्मिन् दुरात्मनि सुरारि-बले च देव्या।
तां तुष्टुवुः प्रणति-नम्र-शिरोधरांसा, वाग्भिः प्रहर्ष-पुलकोद्गम-चारु-देहाः।।२१९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देव्या यया ततमिदं जगदात्म-शक्त्या, निश्शेष-देव-गण-शक्ति-समूह-मूर्त्या।
तामम्बिकामखिल-देव-महर्षि-पूज्याम्, भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः।।२२०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो, ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च।
सा चण्डिकाऽखिल-जगत्-परिपालनाय, नाशाय चाशुभ-भयस्य मतिं करोतु।।२२१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः, पापात्मनां कृत-धियां हृदयेषु बुद्धिः।
श्रद्धा सतां कुल-जन-प्रभवस्य लज्जा, तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि! विश्वम्।।२२२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्, किं चाति-वीर्यमसुर-क्षय-कारि भूरि।
किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि, सर्वेषु देव्यसुर-देव-गणादिकेषु।।२२३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

हेतुः समस्त-जगतां त्रिगुणाऽपि दोषैर्न ज्ञायसे हरि-हरादिभिरप्यपारा।
सर्वाश्रयाऽखिलमिदं जगदंश-भूतमव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या।।२२४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यस्याः समस्त-सुरता समुदीरणेन, तृप्तिं प्रयान्ति सकलेषु मखेषु देवि!
स्वाहाऽसि वै पितृ-गणस्य च तृप्ति-हेतुरुच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च।।२२५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

या मुक्ति-हेतुरविचिन्त्य-महा-व्रता त्वमभ्यस्यसे सु-नियतेन्द्रिय-तत्त्व-सारैः।
मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्त-समस्त-दोषैर्विद्याऽसि सा भगवती परमा हि देवि!।।२२६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

शब्दात्मिका सु-विमलर्ग्यजुषां निधानमुद्गीथ-रम्य-पद-पाठ-वतां च साम्नाम्।
देवी त्रयी भगवती भव-भावनाय, वार्त्ता च सर्व-जगतां परमार्ति-हन्त्री।।२२७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

मेधाऽसि देवि! विदिताऽखिल-शास्त्र-सारा, दुर्गाऽसि दुर्ग-भव-सागर-नौर-सङ्गा।
श्रीः कैटभारि-हृदयैक-कृताधिवासा, गौरी त्वमेव शशि-मौलि-कृत-प्रतिष्ठा।।२२८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ईषत्-सहासममलं परि-पूर्ण-चन्द्र-बिम्बानु-कारि-कनकोत्तम-कान्ति-कान्तम्।
अत्यद्भुतं प्रहृतमाप्त-रुषा तथापि, वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण।।२२९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दृष्ट्वा तु देवि! कुपितं भ्रुकुटी-करालमुद्यच्छशाङ्क-सदृशच्छवि यन्न सद्यः।
प्राणान् मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं, कैर्जीव्यते हि कुपितान्तक-दर्शनेन।।२३०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देवि! प्रसीद परमा भवती भवाय, सद्यो विनाशयसि कोप-वती कुलानि।
विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेतन्नीतं बलं सु-विपुलं महिषासुरस्य।।२३१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ते सम्मता जन-पदेषु धनानि तेषां, तेषां यशांसि न च सीदति बन्धु-वर्गः।
धन्यास्त एव निभृतात्मज-भृत्य-दारा, येषां सदाऽभ्युदयदा भवती प्रसन्ना।।२३२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

धर्म्याणि देवि! सकलानि सदैव कर्माण्यत्यादृतः प्रति-दिनं सुकृती करोति।
स्वर्गं प्रयाति च ततो भवती-प्रसादाल्लोक-त्रयेऽपि फलदा ननु देवि! तेन।।२३३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दुर्गे! स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः, स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि।
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि! का त्वदन्या, सर्वोपकार-करणाय सदाऽऽर्द्र-चित्ता।।२३४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते, कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम्।
संग्राम-मृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु, मत्वेति नूनमहितान् विनिहंसि देवि!।।२३५

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म, सर्वासुरानरिषु यत् प्रहिणोषि शस्त्रम्।
लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्र-पूता, इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽति-साध्वी।।२३६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

खड्ग-प्रभा-निकर-विस्फुरणैस्तथोग्रैः, शूलाग्र-कान्ति-निवहेन दृशोऽसुराणाम्।
यन्नागता विलयमंशुमदिन्दु-खण्ड-योग्याननं तव विलोकयतां तदेतत्।।२३७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दुर्वृत्त-वृत्त-शमनं तव देवि! शीलं, रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः।
वीर्यं च हन्तृ हृत-देव-पराक्रमाणां, वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम्।।२३८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य, रूपं च शत्रु-भय-कार्यति-हारि कुत्र?
चित्ते कृपा समर-निष्ठुरता च दृष्टा, त्वय्येव देवि वरदे! भुवन-त्रयेऽपि।।२३९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपु-नाशनेन, त्रातं त्वया समर-मूर्धनि तेऽपि हत्वा।
नीता दिवं रिपु-गणा भयमप्यपास्तमस्माकमुन्मद-सुरारि-भवं नमस्ते।।२४०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

शूलेन पाहि नो देवि! पाहि खड्गेन चाम्बिके!
घण्टा-स्वनेन नः पाहि, चाप-ज्या-निःस्वनेन च।।२४१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म, सर्वासुरानरिषु यत् प्रहिणोषि शस्त्रम्।
लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्र-पूता, इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽति-साध्वी।।२३६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

खड्ग-प्रभा-निकर-विस्फुरणैस्तथोग्रैः, शूलाग्र-कान्ति-निवहेन दृशोऽसुराणाम्।
यन्नागता विलयमंशुमदिन्दु-खण्ड-योग्याननं तव विलोकयतां तदेतत्।।२३७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

दुर्वृत्त-वृत्त-शमनं तव देवि! शीलं, रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः।
वीर्यं च हन्तृ हृत-देव-पराक्रमाणां, वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम्।।२३८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य, रूपं च शत्रु-भय-कार्यति-हारि कुत्र?
चित्ते कृपा समर-निष्ठुरता च दृष्टा, त्वय्येव देवि वरदे! भुवन-त्रयेऽपि।।२३९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपु-नाशनेन, त्रातं त्वया समर-मूर्धनि तेऽपि हत्वा।
नीता दिवं रिपु-गणा भयमप्यपास्तमस्माकमुन्मद-सुरारि-भवं नमस्ते।।२४०

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

शूलेन पाहि नो देवि! पाहि खड्गेन चाम्बिके!
घण्टा-स्वनेन नः पाहि, चाप-ज्या-निःस्वनेन च।।२४१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च, चण्डिके! रक्ष दक्षिणे।
भ्रामणेनात्म-शूलस्य, उत्तरस्यां तथेश्वरि!।।२४२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

सौम्यानि यानि रूपाणि, त्रैलोक्ये विचरन्ति ते।
यानि चात्यर्थ-घोराणि, तै रक्षास्मांस्तथा भुवम्।।२४३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

खड्ग-शूल-गदादीनि, यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके!
कर-पल्लव-सङ्गीनि, तैरस्मान् रक्ष सर्वतः।।२४४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच ।।२४५।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः, कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः।
अर्चिता जगतां धात्री, तथा गन्धानुलेपनैः।।२४६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैस्तु धूपिता।
प्राह प्रसाद-सुमुखी, समस्तान् प्रणतान् सुरान्।।२४७

क-ए-ई-ल ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देव्युवाच ।।२४८।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

व्रियतां त्रिदशाः! सर्वे, यदस्मत्तोऽभि-वाञ्छितम्।
दादाम्यहमति-प्रीत्या, स्तवैरेभिः सु-पूजिता।।२४९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

देवा ऊचुः ।।२५०।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

भगवत्या कृतं सर्वं, न किञ्चिदवशिष्यते।
यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः।।२५१

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यदि चापि वरो देयस्त्वयाऽस्माकं महेश्वरि!
संस्मृता संस्मृता त्वं नो, हिंसेथाः परमापदः।।२५२

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने!
तस्य वित्तर्द्धि-विभवैर्धन-दारादि-सम्पदाम्।।२५३

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

वृद्धयेऽस्मत् प्रसन्ना त्वं, भवेथाः सर्वदाऽम्बिके।।२५४

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

ऋषिरुवाच ।।२५५।।

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथाऽऽत्मनः।
तथेत्युक्त्वा भद्र-काली, बभूवान्तर्हिता नृप!।।२५६

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

इत्येतत् कथितं भूप!, सम्भूता सा यथा पुरा।
देवी देव-शरीरेभ्यो, जगत्-त्रय-हितैषिणी।।२५७

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

पुनश्च गौरी-देहात् सा, समुद्भूता यथाऽभवत्।
वधाय दुष्ट-दैत्यानां, तथा शुम्भ-निशुम्भयोः।।२५८

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

रक्षणाय च लोकानां, देवानामुप-कारिणी।
तच्छृणुष्व मयाऽऽख्यातं, यथा-वत् कथयामि ते।।२५९

क-ए-ई-ल-ह्रीं ह-स-क-ह-ल-ह्रीं स-क-ल-ह्रीं

**वन्दे श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दरीम्!**
**वन्दे जगन्मोहिनीम्!**
**वन्दे सकल-सौभाग्य-प्रदां सुन्दरीम्!**
**वन्दे सर्व-परां शिवां श्रीराज-राजेश्वरीम्!**

इस प्रकार दुर्गा सप्तशती के आगे के सभी  पाठ सम्पुटित करते हुऐ किये जा सकते है। यदि आपको पाठ की विधि समझने में कोई समस्या प्रतीत होती है तो आप निसंकोच फोन पर सलाह ले सकते हैं